वैश्विक तापवृद्धि से भविष्य में स्वास्थ्य के लिए खतरे

लेखक: **आलोक मुखर्जी**, संदर्भ: **विज्ञान प्रसार**

अब से पहले तक, वैज्ञानिकों और नीतिनिर्माताओं का ध्यान मूल रूप से इस दिशा की ओर केंद्रित था कि तापवृद्धि के कारण पृथ्वी के भौतिक तंत्र पर किस प्रकार के प्रभाव पड़ेगे और इसके लिए बढ़ते समुद्री स्तर और बढ़ते तूफानों का परीक्षण कर संभावनाएं प्रस्तुत करते थे। परंतु आई.पी.सी.सी. द्वारा जलवायु परिवर्तन से मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले संभावित प्रभावों पर एक अध्याय जोड़ा गया है। उदाहरण के लिए, गर्मियों की प्रचंड लू प्रतिवर्ष हजारों अतिरिक्त लोगों की जान ले सकती है। संक्रामक रोगों की महामारियां उष्णकटिबंध से शीतोष्ण जलवायु की ओर बढ़ना जारी रख सकती है और अगली पूरी सदी तक अमेरिका, यूरोप और आस्ट्रेलिया के मध्य अक्षांशीय क्षेत्रों में त्वचा कैंसर के रोगियों की संख्या में बढ़ावा होने की आशंका है।

जलवायु परिवर्तन मानव स्वास्थ्य से जुड़ा हुआ है, इसलिए वैश्विक स्वास्थ्य सर्वे कार्यक्रमों में सुधार, शोध, स्वास्थ्य व्यवसायियों की शिक्षा और अंतरराष्ट्रीय सहयोग आज की आवश्यकता है। औद्योगिक राष्ट्रों में जलवायु परिवर्तन के सबसे गंभीर प्रभाव संभवतया लू के थपेड़ों के रूप में देखे जा सकेंगे। 1 से 3 डिग्री सेल्सियस की वैश्विक तापवृद्धि संभवतया शीतोष्ण क्षेत्रों में अत्यधिक गर्म दिवसों की संख्या में वृद्धि करेगी जिसके परिणामस्वरूप तापघात के कारण कई हजार अतिरिक्त मौतें प्रतिवर्ष हो सकती हैं। गर्मियों की बढ़ती तपिश से बचने के लिए वातनुकूलन विधियों को प्रयोग करने में सक्षम लोग इसका अधिकाधिक उपयोग करेंगे जिससे विद्युतगृहों के द्वारा वायु प्रदूषण में वृद्धि होगी। विद्युत संयंत्रों से निकलने वाले बारीक कण सीधे तौर पर सांस एवं दिल की बीमारियों के कारण अस्पतालों में होने वाली भर्तियों से जुड़े हैं।

अगले 50 सालों में, वायुमंडल के समतापमंडल के मौजूद ओज़ोन के क्षरण के कारण त्वचा कैंसर की संख्या में वृद्धि होने की आशंका है। विशेषकर शीतोष्ण जलवायु जहां ओज़ोन की परत पतली है के गोरी चमड़ी वाले लोगों में इसका खतरा अधिक है। गर्माती धरती के कारण अधिक प्रचंड और अनिश्चित मौसम अपना असर दिखाएगा जिससे अकाल, बाढ़, तूफान आदि में वृद्धि होगी और इसके परिणामस्वरूप मृत्यु दर, चोटग्रस्त होने की दर तथा कीटों के विस्तार के साथ संक्रामक रोगों की दर में वृद्धि दर्ज की जाएगी।

अगले 50 सालों में, वायुमंडल के समतापमंडल के मौजूद ओज़ोन के क्षरण के कारण त्वचा कैंसर की संख्या में वृद्धि होने की आशंका है। विशेषकर शीतोष्ण जलवायु जहां ओज़ोन की परत पतली है के गोरी चमड़ी वाले लोगों में इसका खतरा अधिक है। गर्माती धरती के कारण अधिक प्रचंड और अनिश्चित मौसम अपना असर दिखाएगा जिससे अकाल, बाढ़, तूफान आदि में वृद्धि होगी और इसके परिणामस्वरूप मृत्यु दर, चोटग्रस्त होने की दर तथा कीटों के विस्तार के साथ संक्रामक रोगों की दर में वृद्धि दर्ज की जाएगी। उदाहरण के लिए पिछले

प्रत्येक पांच वर्षों के दौरान, अल नीनो के कारण पूरी दुनिया में बहुत गर्म और नम दौर देखे गए। परिणामस्वरूप मलेरिया, पीत ज्वर और डेंगू के रोगवाहक शीतोष्ण जलवायु और अधिक ऊंचाइयों तक पहुंच गए हैं तथा उन लोगों में संक्रमण पैदा कर रहे है जिनमें इन रोगों के विरूद्ध प्रतिरोधक क्षमता नहीं है। वैश्विक तापवृद्धि के चलते फैलने वाली अन्य प्रमुख बीमारियाँ हैजा, फाईलेरियेसिस और निद्रा रोग है। कुछ विकासशील देशों में तेजी से हो रहा वननाशन और शहरीकरण इस घातकता को और बढ़ाने में सहयोग कर रहा है।

सुझाव

कार्यक्षेत्रों में कार्यरत स्वास्थ्य व्यवसायी बेहतर ढंग से प्रशिक्षित होने आवश्यक हैं जिससे वे नए उभरते रोगों की निगरानी और सूचना देने का कार्य कर सकें। स्थानीय स्वास्थ्य-सुरक्षा कर्मियों को नवीन स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के प्रति अधिक संवेदनशील बनाने के लिए इस प्रकार प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए कि उन्हें पता हो कि समस्या की सूचना उन्हें किसे देनी है। असुरक्षित जनसंख्या, जिनमें बच्चे, वृद्ध एवं वे व्यक्ति सम्मिलित हैं जो ऐसे स्थानों पर रहते हैं जहां रोग की महामारी हो सकती है, को एक विकसित वैश्विक सर्वे तंत्र का लक्ष्य बनाना चाहिए। संवेदनशील लोगों को स्वास्थ्य के प्रति बढ़ते ख़तरों के बारे में बेहतर ढंग से शिक्षित करना चाहिए और टीकों की उपलब्धता तथा उनके प्रभाव की जानकारी भी प्रदान करनी चाहिए।

बुंदेलखंडमें जलवायु परिवर्तन का प्रभाव: अकाल को निमंत्रण

लेखक- **रमेश कुमार दुबे**

पिछले पांच वर्षों से वर्षा में अत्यधिक कमी के कारण समूचा बुंदेलखंड अकाल की चपेट में है। नदी, तालाब, नलकूप सभी सूख चुके हैं। भुखमरी से मौतें हो रही हैं। लोग खेत-खलिहान, पशु-पक्षी छोड़कर रोजी-रोटी की तलाश में महानगरों की ओर पलायन कर रहे हैं। बुंदेलखंड में पहले भी स्थितियां जीवन के अनुकूल नहीं थी लेकिन स्थानीय लोग इन विपरीत परिस्थितियों को अपने जज्बे के बल पर अनुकूल बना लेते थे, और घर-द्वार, खेत-खलिहान छोड़कर जाने की नौबत नहीं आती थी। दरअसल सूखा, विदर्भ में हो या बुंदेलखंड में, बिना बुलाए मेहमान की भांति नहीं आता। धरातल के चट्टानी स्वरूप का होने के कारण बुंदेलखंड की धरती पानी को सोख नहीं पाती है। इसीलिए प्राचीनकाल से कुंए, तालाब यहां की पारंपरिक संस्कृति के अभिन्न अंग रहे हैं। लोग अपनी श्रमनि¬ठा से वर्षा की बूंदों को सहेजकर अपना जीवन चलाते थे। इन बूंदों से ही तालाब भरते थे, "सिमट-सिमट जल भरहिं तलाबा।" ये तालाब सबकी मदद से बनते थे और सबके काम आते थे। लेकिन आधुनिक विकास का रथ जैसे-जैसे आगे बढा वैसे-वैसे पारंपरिक लोक संस्कृति छिन्न-भिन्न हो गई।

आजादी के समय बुंदेलखंड का एक-तिहाई भाग वनाच्छादित था लेकिन कृषि, उद्योग, परिवहन, व्यापार, नगरीकरण जैसी गतिविधियों के कारण जंगल कटते गए और पहाड़ियां-पठार नंगे होते गए। इससे अपरदन

की प्रक्रिया को बढावा मिला और तालाबों में गाद जमा होनी शुरू हुई व उनकी जलग्रहण क्षमता प्रभावित हुई। आधुनिक भारत के नए तीर्थ (बांध) बनाने की प्रक्रिया में बड़े पैमाने पर पेड़ काटे गए। बांध बनने के बाद नहरों की खुदाई की गई और नलकूप-हैंडपंप संस्कृति को बढावा मिला। इससे जलापूर्ति के बारहमासी साधनों (तालाब, कुएं) को अनुपयोगी मान लिया गया। शुरू में तो मशीनी साधनों ने मनु¬य और खेती की प्यास बुझाई लेकिन शीघ्र ही वे थक गए। दूसरी ओर परंपरागत संस्कृति के छिन्न-भिन्न होने से पानी की खपत में तेजी आई। इससे अकाल को निमंत्रण मिला।

हरित क्रांति से पहले बुंदेलखंड की प्रमुख फसलें बाजरा, कोदों, चना, मकई थीं। ये फसले कम पानी पीती थीं

और वहां की भौगोलिक दशाओं के अनुकूल भी थीं। इसके साथ पशुपालन, मुर्गी-बकरी-भेड़ पालन आदि गतिविधियां भी चलती रहती थी। हरित क्रांति के दौर में बुंदेलखंड में भी आधुनिक खेती का पदार्पण हुआ। परंपरागत फसलों की जगह नयी फसलों को बढावा मिला। इन बाहरी फसलों को उगाने के लिए सिंचाई, रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग बढा। इस प्रकार बुंदेलखंड की परंपरागत खेती व्यवसाय का रूप लेने लगी। इससे जल, जंगल और जमीन पर दबाव बढा। रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों के असंतुलित और अनियंत्रित प्रयोग से पानी की मांग बढी। ज़ैसे-जैसे पानी की मांग बढी वैसे-वैसे भूमिगत जल का शो¬षण भी बढा। इससे बचा खुचा भूमिगत जल भी समाप्त हो गया।

आजादी के बाद जो विकास रणनीति अपनाई गई उसमें सामुदायिक जीवन की घोर उपेक्षा हुई। पुल बनाना हो या सड़क, नहर की खुदाई हो या तालाब की सफाई सभी कार्य सरकार पर छोड़ दिया गया। इससे समाज पंगु बन गया। बुंदेलखंड की सदियों पुरानी जल प्रबंधन प्रणाली भुला कर दी गई। पहले तालाब सबकी मदद से बनते थे और सबके काम आते थे लेकिन अब पानी देना सरकार का काम हो गया। अब पानी न मिलने पर लोग अपनी व समाज की जिम्मेदारी को भूलकर सड़क जाम करने, जिला मुख्यालयों, राज्य की राजधानी में प्रदर्शन करने और सांसदों-विधायकों का घेराव करने लगे। यहां तक कि पानी के लिए हिंसक झड़पे भी होने लगी।

वनोन्मूलन, खेती की आधुनिक पद्धति, विकास की संकीर्ण धारा के साथ-साथ नगरीकरण, बढती जनसंख्या, भोगवादी जीवन पद्धति, बदलता मौसम चक्र ने भी बुंदेलखंड में अकाल की तीव्रता को बढाया। इसका समाधान पलायन, विरोध प्रदर्शन, अरबों-खरबों के निवेश आदि न होकर जल संरक्षण में निहित है। भारत में वर्षा से प्रतिवर्ष 4000 बिलियन क्यूबिक मीटर पानी गिरता है जिसमें से हम औसतन 600 बीसीएम पानी का ही इस्तेमाल कर पाते हैं, शे¬ष पानी बरबाद हो जाता है। इससे स्प¬ष्ट है कि देश में पानी की कमी नहीं अपितु अधिकता है। पानी की अधिकता के बाद भी कभी विदर्भ तो कभी बुंदेलखंड में अकाल की पदचाप सुनाई देती रहती है। इसका कारण है कि देश में जल के उपयोग की प्रभावी नीति नहीं बन पाई है। जल की विविधता की उपेक्षा करके उसके साथ समान व्यवहार किया जाने लगा। जल के मिट्टी व फसलों के साथ जो परंपरागत संबंध था उसकी अनदेखी की गई और रेगिस्तान में भी गेहूं उगाया जाने लगा।

वस्तुत: बुंदेलखंड में जल संकट हरे-भरे जंगलों, पहाड़ों और नदियों वाले इस क्षेत्र में हरियाली के विनाश तथा भूमिगत जल के बेलगाम दोहन से उत्पन्न हुआ है। अत: इसका समाधान जल प्रबंधन से ही होगा। हमें समाज को जगाकर परंपरागत संसाधनों (कुआं, तालाब और छोटे-छोटे बांधों) की ओर लौटना होगा। उन फसलों का विकल्प ढूंढना होगा जो अधिक पानी पीती हैं। बरसाती नदियों व नालों की गहराई बढे तथा 2-5 किमी की दूरी पर छोटे-छोटे बांध बनाकर पानी रोकने के उपाय किए जाएं। तरूण भारत संघ ने राजस्थान के अलवर क्षेत्र में सामुदायिक प्रयासों से जल संभरण का कार्य सफलतापूर्वक किया जा रहा है। हमें इससे सीख लेनी होगी।

समाप्त